इकाई 20 साम्प्रदायवाद और भारत का विभाजन*

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 पाकिस्तान बनने की पृष्ठभूमि

20.2.1 मुस्लिम लीग के स्वरूप में परिवर्तन

20.2.2 ब्रिटिश नीति

20.2.3 क्रिप्स मिशन : मार्च-अप्रैल, 1942

20.3 द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की परिस्थितियाँ

20.3.1 शिमला कांफ्रेंस और चुनाव

20.3.2 कैबिनेट मिशन

20.3.3 अंतरिम सरकार की स्थापना

20.3.4 अंग्रेजों के वापस लौटने की समय सीमा का निर्धारण

20.3.5 तीन जून की योजना और इसका परिणाम

20.4 कांग्रेस और विभाजन

20.5 साम्प्रदायिक समस्या के प्रति कांग्रेस का रवैया

20.5.1 समझौते की नीति का खतरा

20.5.2 बुनियादी असफलता

20.6 सारांश

20.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

20.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- ब्रिटिश शासन के अंतिम दशक में साम्प्रदायिकता की प्रकृति की व्याख्या कर सकेंगे;
- पाकिस्तान की माँग की पृष्ठभूमि की जानकारी दे सकेंगे;
- भारत के विभाजन से संबंधित राजनीतिक गतिविधियों को पहचान सकेंगे; और
- पाकिस्तान के निर्माण में अंग्रेजों, लीग और कांग्रेस की भूमिका का मूल्यांकन कर सकेंगे।

20.1 प्रस्तावना

यद्यपि 1940 तक भी साम्प्रदायिकता भारत में फैल गई थी, वस्तुतः 1940 का दशक साम्प्रदायिकता का सबसे संकटकालीन और निर्णायक चरण था। इसी काल में पाकिस्तान की माँग को सामने रखा गया और प्रचारित किया गया। इसी दशक (1947) में पाकिस्तान का निर्माण भी हुआ। इस इकाई में इस बात का प्रयत्न किया गया है कि आप पाकिस्तान बनने की प्रक्रिया से परिचित हो सकें। साथ ही साथ इससे जुड़ी प्रमुख घटनाओं से आपका साक्षात्कार कराया जाएगा।

* यह इकाई ई.एच.आई.-01 की इकाई 36 पर आधारित है।

20.2 पाकिस्तान बनने की पृष्ठभूमि

पाकिस्तान की माँग एकाएक सामने नहीं आयी। 1937 के बाद राजनीतिक गतिविधियों ने कुछ इस प्रकार का रुख लिया जिससे शनैः शनैः पाकिस्तान की माँग जोर पकड़ती गयी। 1937 के बाद हिंदू और मुस्लिम साम्प्रदायिक शक्तियों की राजनीति में गंभीर परिवर्तन हुए। पाकिस्तान की माँग को स्वीकार कर और बढ़ावा देकर अंग्रेजों ने आग में घी डालने का काम किया।

20.2.1 मुस्लिम लीग के स्वरूप में परिवर्तन

1937 में मुस्लिम साम्प्रदायिकता ने एक नया रुख अख्यितार किया। 1937 में प्रांतीय विधान सभाओं के लिए हुए चुनाव में मुस्लिम लीग मुसलमानों के लिए आरक्षित 492 सीटों में से मात्र 109 सीटों पर ही विजय प्राप्त कर सकी अर्थात् उसे कुल मुस्लिम वोट का मात्र 4.8 प्रतिशत ही प्राप्त हुआ। चुनाव के इन नतीजे से लीग के सामने यह स्पष्ट हो गया कि उसे अपना प्रभाव मुस्लिम जनता, खासकर शहर में रहने वाले निम्न मध्यवर्गीय मुसलमानों के बीच बढ़ाना होगा। चूँकि लीग का मौजूदा सामाजिक आधार भूमिपतियों और वफादार लोगाों तक ही सीमित था, अतः इस लीग ने ''इस्लाम खतरे में हैं'' का नारा दिया और हिंदू राज की आशंका से मुसलमानों को भयभीत किया। बहुत जल्द ही एक धर्म को खतरे से बचाने का नारा दूसरे धर्म अनुयायियों के प्रति विद्वेष में बदल गया। डब्ल्यू. सी. स्मिथ के अनुसार, साम्प्रदायिक दुष्प्रचार ''धर्मोत्साह, आतंक, तिरस्कार और घृणा'' से परिपूर्ण था। जिन्ना और अन्य लीग के नेताओं ने ऐलान कर दिया कि कांग्रेस का उद्देश्य स्वतंत्रता प्राप्ति नहीं बल्कि हिंदू राज्य की स्थापना है। उनके अनुसार, कांग्रेस का मूल उद्देश्य मुस्लिमों पर आधिपत्य स्थापित करना है और उनके धार्मिक विश्वास पर कुठाराघात करना है। एक बार मुसलमानों के मन में हिंदू राज्य का भय बैठा देने के बाद लीग के नेताओं के लिए ऐसे राष्ट्र की माँग काफी आसान हो गयी, जिसमें मुसलमान स्वतंत्रता से जी सकें और अपने धार्मिक विश्वास की रक्षा कर सकें। 1937 के बाद की लीग की इस घृणा और भय फैलाने की नीति के फलस्वरूप पाकिस्तान की माँग सामने आयी। मार्च 1940 के लाहौर अधिवेशन में लीग ने प्रसिद्ध लाहौर प्रस्ताव जारी किया और इसमें मुसलमानों के लिए इस आधार पर अलग संप्रभु राज्य की माँग की कि ''हिंदू'' और ''मुसलमान'' दो अलग राष्ट्र हैं।

20.2.2 ब्रिटिश नीति

मुस्लिम साम्प्रदायिकता को भड़काने में अंग्रेज सरकार की महत्वपूर्ण भूमिका थी। अंग्रेजों ने मुस्लिम साम्प्रदायवादियों की खुलेआम सरकारी सहायता की। उनकी फूट डालो और शासन करो की नीति ने 1937 तक हिन्दू और मुसलमानों के बीच कभी न पाटी जाने वाली खाई खोद डाली। हिंदुस्तानियों को विभाजित करने की दूसरे प्रकार की कोशिशें नाकाम हो चुकी थीं। इसके पहले उपनिवेशवादी शक्तियों ने राष्ट्रीय आंदोलनों के खिलाफ भूमिपतियों तथा पिछड़ी और अनुसूचित जातियों को खड़ा करने की कोशिश की। उन्होंने कांग्रेस के वामपंथी और दक्षिण पंथी दलों को विभक्त करने की भी कोशिश की थी, पर उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। 1937 के चुनाव के बाद यह स्पष्ट हो गया कि अंग्रेज सरकार के पास साम्प्रदायिकता का ही एक रास्ता बच गया था जिसके माध्यम से हिंदुस्तानियों को विभाजित किया जा सकता था।

द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने के बाद वाइसरॉय लिनलिथगो ने प्रयत्नपूर्वक मुस्लिम लीग को प्रोत्साहित किया। कांग्रेस इस बात पर अड़ी थी कि विश्व युद्ध के बाद अंग्रेजों को भारत छोड़ देना होगा। लेकिन युद्ध से पहले ही सत्ता हिंदुस्तानियों के हाथ में सौंप दी जानी चाहिए। अंग्रेजी शासन ने यह तर्क दिया कि पहले हिन्दू और मुस्लिम हस्तांतरण

की प्रक्रिया पर सहमत हो जाए तभी बात आगे बढ़ सकती है। सरकारी तौर पर लीग को मुस्लिम हित के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया गया। (हालांकि पिछले चुनाव का परिणाम मुस्लिम लीग के इस दावे से मेल नहीं खाता था) और अंग्रेजों ने उनसे यह भी वादा किया कि बिना लीग की सहमति से कोई भी राजनीतिक समझौता नहीं किया जाएगा। इस प्रकार लीग को ऐसी वीटो शक्ति प्राप्त हुई जिसका उपयोग जिन्ना ने युद्ध की समाप्ति के बाद किया।

20.2.3 क्रिप्स मिशन : मार्च-अप्रैल, 1942

मार्च 1942 में स्टैफोर्ड क्रिप्स (यह लेबर पार्टी का नेता था जिसके बहुत से कांग्रेसी नेताओं के साथ दोस्ताना संबंध थे) के नेतृत्व में एक आयोग भारत पहुँचा। प्रकट रूप में जिसका उद्देश्य था जल्द से जल्द भारत में स्वशासी सरकार की स्थापना, पर क्रिप्स ने जिन प्रावधानों की घोषणा की, उससे काफी निराशा उत्पन्न हुई। इसमें पूर्ण स्वतंत्रता देने की बात नहीं की गई थी बल्कि भारत को, और वह भी युद्ध के बाद, डॉमिनियन स्टेट्स का दर्जा देने की बात की गयी। और इसमें प्रस्तावित संविधान सभा के निर्माण का प्रावधान था जिसमें भारतीय रजवाड़ों का प्रतिनिधित्व राजाओं के प्रतिनिधियों द्वारा होना था। इसमें यह बिल्कुल स्पष्ट था कि नये कार्यकारिणी परिषद में नियंत्रण पूरी तरह अंग्रेज शासकों के अधीन रहना था। कांग्रेस ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। एमरी, जो भारत के लिए सचिव थे, ने इस प्रस्ताव को रूढ़िवादी, प्रतिक्रियावादी और संकुचित कहा। लेकिन क्रिप्स प्रस्ताव ने अप्रत्यक्ष रूप से पाकिस्तान बनने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इसमें एक धारा थी जिसे ''लोकल आप्शन'' (स्थानीय विकल्प) के रूप में जाना जाता है। इसके अनुसार, प्रांतों को यह अधिकार दिया गया कि भविष्य में अपनी स्थिति निर्धारित करने के लिए ब्रिटेन से सीधा समझौता कर सकते हैं और इसके साथ ही साथ भविष्य में बनने वाले नये संविधान को अस्वीकार भी कर सकते हैं।

हालांकि क्रिप्स मिशन असफल रहा लेकिन इसने मुस्लिम लीग को एक तरह से प्रोत्साहित किया। प्रांतीय स्वायत्तता के प्रावधान ने पाकिस्तान बनने की माँग को वैधानिक रूप प्रदान किया। जिस समय भारतीयों द्वारा इस समस्या को बहुत हल्के ढंग से लिया जा रहा था उस समय पाकिस्तान बनाने की माँग को सरकारी तंत्र ने काफी तेजी से प्रोत्साहित किया।

बोध प्रश्न 1

1) मुस्लिम लीग ने ''इस्लाम खतरे में है'' का नारा क्यों दिया?

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारत में साम्प्रदायिक विभाजन को बढ़ाने में ब्रिटिश नीति की भूमिका की विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

20.3 द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की परिस्थितियाँ

इस भाग में हम द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से लेकर पाकिस्तान बनने तक की घटनाओं का क्रमबद्ध विवरण आपके सामने प्रस्तुत करने जा रहे हैं। दो वर्ष की इस अवधि के दौरान जो घटनाएँ घटीं उनसे भारत के विभाजन और पाकिस्तान के निर्माण में काफी सहायता मिली।

20.3.1 शिमला कांफ्रेंस और चुनाव

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद वाइसरॉय वैवेल ने जून, 1945 के मध्य में कांग्रेसी नेताओं को जेल से रिहा कर दिया। उन्हें अंतरिम समझौते के लिए शिमला में आमंत्रित किया। इस कांफ्रेंस में इस बात पर विचार होना था कि भारतीय किस तरह अपने देश पर शासन करेंगे। कांग्रेस सहयोग के लिए तैयार थी और उसने अपने प्रतिनिधियों की सूची भी भेज दी। लेकिन जिन्ना अंग्रेजों द्वारा प्रदत्त अपनी वीटो शक्ति को आजमाना चाहते थे। उन्होंने जोर दिया कि कार्यकारिणी परिषद् में मुसलमानों को नामजद करने का अधिकार केवल लीग को ही है। सरकार मुस्लिम लीग के इस दावे के कारण धर्मसंकट में पड़ गयी क्योंकि इसमें पंजाब के उन यूनियनिस्ट पार्टी के मुसलमानों को प्रतिनिधित्व नहीं मिल पा रहा था जिन्होंने युद्ध के दौरान अंग्रेजों की दृढ़तापूर्वक सहायता की थी। लेकिन वैवेल ने अतीत की वफादारी की अपेक्षा वर्तमान और भविष्य के हितों को अधिक महत्व दिया और उसने मुस्लिम लीग की माँग को अस्वीकार करने के बजाय कांफ्रेंस को भंग करने की घोषणा कर दी। जिन्ना की वीटो शक्ति कामयाब हुई।

चुनाव-अंतिम हथियार

केन्द्रीय और प्रांतीय विधान सभाओं के चुनावों में लीग ने सीधा साम्प्रदायिक नारा दिया – ''लीग और पाकिस्तान के लिए वोट देने का मतलब है इस्लाम के लिए वोट देना।'' चुनाव की सभाओं के लिए मस्जिदों का उपयोग किया गया और पीरों से यह अनुरोध किया गया कि वे यह फतवा जारी करें कि मुसलमान लीग को ही वोट दें। मुस्लिम जनता से यह कहा गया कि कांग्रेस और लीग में से किसी एक को चुनने का मतलब है **गीता** और **कुरान** में से किसी एक को चुनना। इस साम्प्रदायिक माहौल में अगर लीग ने सभी मुस्लिम सीटों पर विजय प्राप्त की तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

20.3.2 कैबिनेट मिशन

1946 के आरंभ में अंग्रेज अधिकारी पूरी तरह समझ गए थे कि अब उनके लिए यही अच्छा होगा कि वे सम्मानजनक ढंग से भारत से लौट जाएँ। मार्च 1946 में कैबिनेट मिशन भारत भेजा गया। इसका उद्देश्य एक राष्ट्रीय सरकार की स्थापना करना और सत्ता हस्तांतरण की संवैधानिक व्यवस्था को खोजना था। जब अंग्रेजों ने भारत छोड़ने का निर्णय लिया तो यह विश्वास किया गया कि फूट डालो और राज करो की पुरानी नीति अब नहीं चल सकती। इसके पक्ष में यह तर्क भी सामने रखा गया कि स्वतंत्रता के बाद एकीकृत भारत ब्रिटेन के हक में लाभप्रद होगा। इस तर्क के पीछे यह विश्वास भी निहित था कि एकीकृत भारत की सैन्य शक्ति राष्ट्रमंडल (कामनवेल्थ) की प्रतिरक्षा की सक्रिय सहयोगी बन सकेगी और यदि भारत और पाकिस्तान का बँटवारा हो गया तो भारत की सैन्य शक्ति दुर्बल हो जाएगी। भारत पाकिस्तान के आपसी झगड़े से राष्ट्रमंडल (कॉमनवेल्थ) की शक्ति भी कमजोर होगी। इन नीति परिवर्तन के कारण कांग्रेस और लीग के प्रति अंग्रेजों का रवैया बदल गया। ब्रिटेन के प्रधानमंत्री एटली ने 15 मार्च, 1946 को घोषणा की कि ''बहुसंख्यक के निर्णय पर अल्पसंख्यकों को वीटो लगाने का अधिकार नहीं दिया जाएगा।'' यह नीति जून 1945 की शिमला कांफ्रेंस के समय वाइसरॉय वैवेल की नीति से बिल्कुल विपरीत थी, जब शिमला कांफ्रेंस में जिन्ना

ने मुसलमानों को नामजद करने के एकाधिकार का दावा किया। कैबिनेट मिशन का यह भी विश्वास था कि पाकिस्तान का अलग अस्तित्व सम्भव नहीं है। अतः मिशन ने योजना बनायी उसके अंतर्गत देश की एकता को ध्यान में रखते हुए मुस्लिम अल्पसंख्यक के हितों की रक्षा की बात की गयी। संविधान के स्वरूप निर्धारण के लिए कार्यकारी दल को तीन भागों में विभाजित किया गया। मद्रास, बंबई, संयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्य प्रांत और उड़ीसा को समूह ''क'' में रखा गया। पंजाब, उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रदेश और सिन्ध को समूह ''ख'' में रखा गया और समूह ''ग'' का निर्माण आसाम और बंगाल को मिलाकर हुआ। प्रतिरक्षा, विदेशी मामलों और संचार को केंद्र के अधीन रखा गया। प्रथम आम चुनाव के बाद कोई प्रांत अपने समूह को छोड़ सकता था और 10 वर्ष के बाद समूह और केन्द्रीय संविधान में परिवर्तन की माँग कर सकता था।

समूहीकरण की नीति में अस्पष्टता

समूहीकरण के मसले पर कांग्रेस और लीग के बीच मतभेद हो गया। कांग्रेस की यह माँग थी कि प्रांतों के पास यह विकल्प होना चाहिए कि आरंभ में यदि वे न चाहे तो किसी समूह विशेष में शामिल न हों। आम चुनावों तक इस निर्णय के लिए इंतजार करना उचित नहीं है। कांग्रेस के इस विरोध का कारण था कि आसाम और उत्तर–पश्चिम सीमांत प्रदेश को समूह ''ग'' और ''ख'' में रखा गया था। जबकि दोनों प्रांतों में कांग्रेस की सरकार थी। लीग ने यह माँग की कि प्रांतों को केन्द्रिय संविधान में तुरंत परिवर्तन करने का अधिकार दिया जाए। इसके लिए आगे 10 वर्षों तक इंतजार करना ठीक नहीं। आधारभूत समस्या यह थी कि कैबिनेट मिशन प्लान में यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया था कि समूहीकरण अनिवार्य था या वैकल्पिक। वस्तुतः जब कैबिनेट मिशन से स्पष्टीकरण माँगा गया तो उसने ऐसा करने से इंकार कर दिया। कैबिनेट मिशन का यह विश्वास था कि इस अस्पष्टता की नीति से कांग्रेस और लीग की परस्पर विरोधी स्थिति में सामंजस्य स्थापित हो जाएगा : पर इससे मामला और उलझता गया।

इस अस्पष्टता के कारण स्वाभाविक रूप से लीग और कांग्रेस अपने फायदे के हिसाब से प्लान की व्याख्या करने लगे। सरदार पटेल यह निष्कर्ष निकालकर खुश हो रहे थे कि अब पाकिस्तान का मामला समाप्त हो चुका है और लीग की वीटो शक्ति वापस ले ली गयी है। 6 जून, 1946 को अपने वक्तव्य में लीग ने यह स्पष्ट कर दिया कि उसने प्लान को इसी कारण स्वीकार किया है क्योंकि इसमें अनिवार्य समूहीकरण की बात की गयी है जो पाकिस्तान निर्माण का आधार है। 7 जून, 1946 को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी को नेहरू जी ने संबोधित करते हुए कहा कि कांग्रेस संविधान सभा में सम्मिलित होगी। एक संप्रभु निकाय होने के कारण संविधान सभा केवल कार्यप्रणाली के नियमों को सूत्रबद्ध करेगी। यह समझा जा रहा था कि मिशन द्वारा बनाए गए नियमों को संशोधित किया जा सकता है। नेहरू के भाषण का तत्काल लाभ उठाकर 29 जुलाई, 1946 को लीग ने कैबिनेट मिशन प्लान को अस्वीकार कर दिया।

20.3.3 अंतरिम सरकार की स्थापना

अंग्रेज सरकार इस दुविधा में पड़ गयी कि वह लीग के सम्मिलित होने का इंतजार करे या योजना को कामचलाऊ रूप से कार्यान्वित करे और केवल कांग्रेस के साथ अंतरिम सरकार की स्थापना करे। वैवेल लीग को साथ लेकर चलना चाहते थे, पर ब्रिटेन की सरकार कांग्रेस को साथ लेकर चलने के पक्ष में थी। ब्रिटेन की सरकार को यह विश्वास था कि कांग्रेस के साथ सहयोग आने वाले समय के लिए हितकारी होगा। इस नीति के तहत कांग्रेस की अंतरिम सरकार का गठन हुआ। जिन्ना और लीग को नजरअंदाज करते हुए अंतरिम सरकार की स्थापना ब्रिटिश नीति में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का संकेत करती है। पहली बार जिन्ना के इस दावे को अंग्रेजों ने नजरअंदाज कर दिया कि लीग की सहमति के बगैर कोई संवैधानिक समझौता नहीं किया जा सकता है।

लीग द्वारा प्रत्यक्ष कार्रवाई

हालांकि जिन्ना को विश्वास था कि अंग्रेज अपनी पुरानी नीति का अनुसरण करेंगे। उन्होंने ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली को चेतावनी दी कि यदि अंग्रेज कांग्रेस के समक्ष घुटने टेकते हैं और उन्हें अहमियत देते हैं, तो मुसलमान संघर्ष करने के लिए बाध्य हो जाएँगे। यह कोई खाली धमकी नहीं थी क्योंकि लीग ने प्रत्यक्ष कार्रवाई की योजना अब तक बना ली थी। 16 अगस्त 1946 को कलकत्ता में प्रत्यक्ष कार्रवाई का आह्वान किया गया और एक नया नारा लगाया गया – ''लड़कर लेंगे पाकिस्तान''। इस साम्प्रदायिक आग को मुसलमान साम्प्रदायिक दलों ने हवा दी। इस समय बंगाल में सुहरावर्दी के नेतृत्व में लीग का मंत्रीमंडल था। उन्होंने प्रत्यक्ष रूप में तो नहीं लेकिन इस मामले में उदासीन रहकर साम्प्रदायिक वातावरण को बिगड़ने का मौका दिया। इसकी हिन्दू सम्प्रदायवादी तत्वों में प्रतिक्रिया हुई, दंगें हुए और पाँच हजार लोग मारे गए। इसे कलकत्ता के नरसंहार के नाम से जाना जाता है। अक्तूबर, 1946 के आरंभ में पूर्वी बंगाल के नोआखली में गड़बड़ी पैदा हुई और प्रतिक्रिया स्वरूप, अक्तूबर, 1946 के अंत में बिहार में मुसलमानों पर हमला किया गया। आने वाले महीनों में संयुक्त प्रांत, बम्बई और उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रांत में दंगे हुए। इस साम्प्रदायिक आंधी को रोका नहीं जा सका।

अंग्रेजों द्वारा लीग से समझौता

इस कत्लेआम को जिन्ना रोक सकते थे। अतः अंग्रेज अधिकारियों ने मुसलमानों को प्रसन्न करने की अपनी पुरानी नीति को फिर से अपनाया। वे यह जानते थे कि लीग उन्हीं का बनाया हुआ है पर अब उसका स्वरूप इतना घातक हो गया है कि उसे वश में नहीं किया जा सकता। वैवेल लगातार कोशिश कर रहे थे कि लीग को सरकार में शामिल किया जाए। इसी समय भारत सचिव (सेक्रेटरी ऑफ स्टेट) पैथिक लारेंस ने उनका समर्थन किया। लारेंस का कहना था कि यदि लीग को शामिल नहीं किया गया जो गृहयुद्ध अवश्यम्भावी होगा। इस प्रकार 26 अक्तूबर, 1946 को लीग अंतरिम सरकार में शामिल हुई।

अंतरिम सरकार : संघर्ष का दूसरा दौर

अंतरिम सरकार में लीग के शामिल होने से झगड़ा समाप्त नहीं हुआ बल्कि इससे संघर्ष का एक नया क्षेत्र खुल गया, लीग को अंतरिम सरकार में शामिल होने के लिए पाकिस्तान या सीधी कार्रवाई का त्याग करने की शर्त नहीं थी। इसके अतिरिक्त उन्होंने कैबिनेट मिशन प्लान के अल्पावधि और दीर्घावधि पहलुओं को स्वीकार नहीं किया था। लीग के नेताओं और खासकर जिन्ना ने खुले आम यह घोषणा की कि अंतरिम सरकार अन्य तरीकों से गृहयुद्ध जारी रखने का केवल एक माध्यम है। जिन्ना यह सोचते थे कि प्रशासन पर कांग्रेस का नियंत्रण लीग के हित में नहीं है और इसी कारण वे चाहते थे कि लीग को भी सत्ता में हिस्सा मिले। अंतरिम सरकार को उन्होंने एक ऐसे आधार के रूप में देखा जिसके सहारे लीग को पाकिस्तान के निर्माण में मदद मिल सकती थी।

अंतरिम सरकार में कांग्रेस और लीग के सदस्यों के बीच मतभेद तुरंत उभरकर सामने आ गए। लियाकत अली खान के अलावा लीग ने अंतरिम सरकार में प्रतिनिधि के रूप में अपने दूसरे दर्जे के नेताओं को भेजा। इससे उनका मन्तव्य साफ हो गया कि वे सरकार चलाने में कांग्रेस के साथ भागीदारी नहीं करना चाहते। दूसरी तरफ यह मंशा भी स्पष्ट हो गयी कि दोनों के बीच सहयोग असंभव है। लीग के मंत्रियों ने अपना एक सिद्धांत सा बना लिया था कि कांग्रेसी मंत्रियों द्वारा लिए गए किसी भी निर्णय का विरोध किया जाए। कार्यकारिणी परिषद के पहले होने वाली तैयारी की बैठकों में लीग नेताओं ने कभी हिस्सा नहीं लिया, जिसमें कांग्रेसी सदस्य एक आम निर्णय लेते थे ताकि वैवेल की नीति सफल न हो सके।

अंतरिम सरकार – टूटने के कगार पर

कांग्रेसी नेताओं ने आरम्भ में ही लीग के नेताओं को शामिल किए जाने पर असहमति व्यक्त की। उनका कहना था कि कैबिनेट मिशन प्लान को स्वीकार किए बिना लीग को अंतरिम सरकार में शामिल नहीं किया जाना चाहिए। बाद में जब सरकार के अन्दर और बाहर लीग की असहयोग नीति स्पष्ट हो गयी तब कांग्रेसी सदस्यों ने यह माँग की कि लीग या तो प्रत्यक्ष कार्रवाई को बन्द करे या सरकार छोड़ दे। हालांकि 6 दिसम्बर, 1946 को ब्रिटिश सम्राट ने लीग के समूहीकरण पर दृढ़ बने रहने का समर्थन किया था फिर भी 9 दिसम्बर, 1946 के संविधान सभा में लीग ने भाग लेने से इंकार कर दिया। टकराव की स्थिति उत्पन्न हो गयी। तब लीग ने यह माँग की कि संविधान सभा को भंग कर देना चाहिए क्योंकि यह अप्रतिनिधिक है। 5 फरवरी, 1947 को अंतरिम सरकार के कांग्रेस सदस्यों ने वैवेल के पास एक पत्र भेजा जिसमें यह माँग की गयी कि लीग के नेताओं को इस्तीफा देने के लिए कहा जाएँ इससे एक संकट की स्थिति उत्पन्न हो गयी।

20.3.4 अंग्रेजों के वापस लौटने की समय सीमा का निर्धारण

एटली ने 20 फरवरी, 1947 को संसद में यह घोषणा की कि 30 जून, 1948 तक अंग्रेज भारत छोड़ देंगे। एटली की इस घोषणा से संकटपूर्ण स्थिति थोड़ी देर के लिए टली। वैवेल के स्थान पर माउंटबेटेन भारत के वाइसरॉय बनाए गए। इस संवैधानिक संकट का यह कोई हल नहीं था पर एक बात स्पष्ट हो गयी कि अंग्रेज भारत छोड़ने के अपने निर्णय पर टिके हुए हैं। कांग्रेस ने एक बार फिर लीग से सहयोग की माँग की। नेहरू ने लियाकत अली खान से अनुरोध किया :

''अंग्रेज अब हमारे देश से जा रहे हैं और इस निर्णय की जिम्मेदारी हम सबके कन्धों पर समान रूप से पड़नी चाहिए। इसके लिए यह जरूरी है कि इस मामले पर विचार करने के लिए हम दूर-दूर रहकर बात न करें बल्कि आपस में विचार-विमर्श कर हल निकालें''।

लेकिन एटली की घोषणा की प्रतिक्रिया जिन्ना पर कुछ दूसरे ढंग से हुई। वे आश्वस्त थे कि अब उन्हें केवल पाकिस्तान की माँग पर अड़े रहने की जरूरत है। वस्तुतः उद्घोषणा से यह स्पष्ट था कि सत्ता का हस्तातंरण एक से अधिक प्राधिकारों के बीच होगा। ऐसा वातावरण इसलिए बन रहा था क्योंकि संविधान सभा में मुस्लिम बहुल प्रांत शामिल नहीं हो रहे थे और यह संपूर्ण भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व नहीं कर रही थी।

एटली के वक्तव्य के सम्बन्ध में पंजाब के गवर्नर की यह चेतावनी सही साबित हुई कि अब इसके परिणामस्वरूप व्यवस्था का बिखरना अवश्यम्भावी था और इस स्थिति में लोग अधिक से अधिक शक्ति अख्तियार करने की कोशिश करेंगे। उनकी चेतावनी सही सिद्ध हुई। लीग ने पंजाब में नागरिक अवज्ञा आन्दोलन शुरू किया, जिसके कारण यूनियनिस्ट पार्टी के खिज्र हयात खान के नेतृत्व वाली मिली-जुली सरकार समाप्त हो गयी। अतः जब माउंटबेटन भारत पहुँचे तब भारत की स्थिति पूरी तरह दुर्दमनीय थी। लीग युद्ध करने के लिए आमादा थी। और वह संप्रभु पाकिस्तान से कम कुछ भी स्वीकार करने को तैयार नहीं थी। कैबिनेट मिशन प्लान की प्रासंगिकता समाप्त हो चुकी थी। अतः इस पर विचार करने का कोई मतलब नहीं था। अब अंग्रेजों के सामने एक ही उपाय बचा था – देश की एकता को कायम करने के लिए सारा बल लगाना, क्योंकि लीग से और समझौता संभव नहीं था। कांग्रेस और लीग के बीच मध्यस्थता की नीति को छोड़ना अब जरूरी था। यह नीति अपनायी गयी कि जो एकता का विरोध करेंगे उन पर दबाव डाला जाएगा और जो एकता के पक्षधर होंगे उन्हें समर्थन मिलेगा। हालांकि कुछ वर्षों बाद एटली ने कहा था, ''हम संयुक्त भारत चाहते थे। हम अपने सम्पूर्ण प्रयत्नों

के बाद ऐसा नहीं कर सकें।'' पर सच्चाई यह थी कि अंग्रेजों ने अस्पष्ट नीति अपनायी और दोनों पक्षों का समर्थन देकर अपनी स्थिति सुरक्षित रखनी चाही। इस तथ्य में पूरी सच्चाई है कि अराजकता की स्थिति को अंग्रेजों ने रोकने की कोशिश नहीं की। उन्होंने दंगों को रोकने के लिए बल प्रयोग नहीं किया, जबकि ऐसा करना समय की माँग थी।

20.3.5 तीन जून की योजना और इसका परिणाम

यह कांग्रेस और लीग दोनों को रियायतें देकर किया गया था। इसमें तय किया गया कि भारत का विभाजन इस तरीके से किया जाए जिससे भारत की एकता सुरक्षित रहे। पाकिस्तान के निर्माण की बात मानकर लीग की अहम माँग पूरी की गयी थी, अतः कांग्रेस की भारत की एकता की माँग को अधिक से अधिक पूरा करने की कोशिश की गयी। मसलन माउंटबेटन ने कांग्रेस के इस प्रस्ताव का समर्थन किया कि भारतीय रजवाड़ों को स्वतंत्र रहने का विकल्प नहीं दिया जा सकता। माउंटबेटन यह महसूस कर रहे थे कि स्वतंत्रता के बाद भारत को कामनवेल्थ में रखने के लिए कांग्रेस को खुश रखना आवश्यक है। 3 जून योजना में यह निर्णय लिया गया कि 15 अगस्त, 1947 को भारत और पाकिस्तान को सत्ता का हस्तान्तरण डॉमिनियन स्टेट्स के आधार पर हो जाएगा।

कांग्रेस डॉमिनियन स्टेट्स का दर्जा प्राप्त करने के लिए राजी थी क्योंकि इससे सत्ता का हस्तांतरण तुरन्त हो जाता और साम्प्रदायिक संकट से जुझने की शक्ति मिल जाती। साम्प्रदायिक विद्वेष और दंगों को रोकने में अंग्रेज अधिकारी बहुत उत्साहित नहीं थे। सरदार पटेल ने वाइसरॉय को दिए गए अपने इस वक्तव्य में स्थिति को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया। ''आप खुद शासन करना नहीं चाहते और न ही हमें शासन चलाने देना चाहते हैं। अंग्रेज उत्तरादायित्व छोड़ चुके थे। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह था कि उन्होंने भारत छोड़ने की तिथि घटाकर 15 अगस्त, 1947 कर दी।

जिस तेजी से देश का विभाजन हुआ वह भारतीय दृष्टिकोण से बड़ा ही दुखदायी था। अंग्रेजों को इससे फायदा हुआ क्योंकि बिगड़ती साम्प्रदायिक स्थिति के उत्तरदायित्व से उन्हें मुक्ति मिल गयी। सत्ता का हस्तान्तरण और देश का विभाजन दोनों ही जटिल प्रक्रियाएँ थीं और ये दोनों ही 3 जून से 15 अगस्त, 1947 के बीच के बहत्तर दिनों में सम्पन्न हुई। कुछ अंग्रेज अधिकारी जैसे सेनाध्यक्ष और पंजाब के गवर्नर का यह मत था कि शांतिपूर्ण विभाजन के लिए कम से कम दो वर्षों का समय मिलना चाहिए। जिन्ना ने मामले को यह कहकर और बिगाड़ दिया कि वे भारत और पाकिस्तान के लिए सामान्य गवर्नर जनरल के रूप में माउंटबेटन को स्वीकार नहीं करेंगे। अब कोई ऐसी संस्था नहीं रह गयी थी जहाँ विभाजन से उठने वाली समस्याओं को रखा जा सके। यहाँ तक कि दिसम्बर, 1947 में कश्मीर में युद्ध होने से संयुक्त रक्षा तंत्र भी टूट गया।

विभाजन के दौरान कत्लेआम

विभाजन की तीव्रता और सीमा आयोग के निर्णयों में विलम्ब ने विभाजन की त्रासदी को और गंभीर बना दिया। ये माउंटबेटन के निर्णय थे। संकटपूर्ण स्थिति के उत्तरदायित्व से बचने के लिए माउंटबेटन ने सीमा आयोग का निर्णय सुनाने में विलम्ब किया। (जबकि यह 12 अगस्त, 1947 को तैयार हो गया था।) इसके कारण आम नागरिक और अधिकारी उलझन में पड़ गए। लाहौर और अमृतसर के बीच के गाँवों में रहने वाले लोग इस आशा में अपने निवास स्थानों पर टिके रहे कि वे सही सीमा के अन्तर्गत रह रहे हैं। देशान्तरण उन्मत्त मामला बन जाता है और अक्सर इसका परिणाम होता है कत्लेआम। अधिकारीगण अपने स्थानांतरण के चक्कर में पड़े हुए थे और उन्हें कानून और व्यवस्था की कोई चिन्ता नहीं थी। लखार्ट ने, जो 15 अगस्त से लेकर 3 दिसंबर, 1947 तक भारतीय सेनाध्यक्ष थे, इस स्थिति का स्पष्ट ब्यौरा इन शब्दों में दिया ''अगर

प्रशासनिक सेवा और सैन्य सेवा के अधिकारियों को विभाजन के पहले अपने देश भेज दिया जाता, तो अव्यवस्था को रोकने में ज्यादा सफलता मिलती।''

बोध प्रश्न 2

1) निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़ें और उनके सामने सही (✓) अथवा गलत (✗) का निशान लगाएँ:

   i) मुस्लिम लीग ने सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम को चुनाव का आधार बनाया। ( )

   ii) कांग्रेस कार्यकर्ताओं के असहयोग के कारण अंतरिम सरकार सफल नहीं हो सकी। ( )

   iii) जिन्ना की इच्छा थी कि मांउटबेटन भारत और पाकिस्तान के सामान्य गवर्नर जनरल बनें। ( )

2) कैबिनेट मिशन प्लान के गुण और दोषों का उल्लेख करें।

.....

.....

.....

.....

.....

20.4 कांग्रेस और विभाजन

सवाल यह पैदा होता है कि कांग्रेस ने विभाजन क्यों स्वीकार किया। लीग और अंग्रेजों की सहमति की बात तो समझ में आती है पर कांग्रेस ने, जो इतने दिनों में भारत की एकता के लिए संघर्ष कर रही थी, अपना प्रयत्न क्यों छोड़ दिया? एक मत यह है कि सत्ता प्राप्ति के लोभ के कारण कांग्रेसी नेताओं ने विभाजन स्वीकार कर लिया। लेकिन यह मत सही नहीं है। भारत का विभाजन किसी नेता की व्यक्तिगत असफलता का परिणाम नहीं था, बल्कि सम्पूर्ण संगठन की बुनियादी असफलता का फल था।

कांग्रेस को अंततः विभाजन स्वीकार करना पड़ा क्योंकि वे मुस्लिम जन समुदाय को राष्ट्रीय मुख्यधारा में शामिल नहीं कर पाए और 1937 के बाद मुस्लिम सम्प्रदाय के बढ़ते चरण को रोक भी नहीं पाए। 1946 तक कांग्रेसी नेताओं के सामने यह स्पष्ट हो गया कि मुसलमान लीग के साथ हैं क्योंकि चुनाव में 80 प्रतिशत मुस्लिम आरक्षित सीटों पर लीग की विजय हुई थी। एक साल बाद विभाजन अवश्यमभावी हो गया जब पाकिस्तान का मामला मत पेटी तक सीमित न रहकर सड़कों पर आ गया। साम्प्रदायिक दंगों से सारा देश आक्रांत हो उठा और अन्ततः कांग्रेसी नेताओं ने यह महसूस किया कि गृह युद्ध होने से अच्छा है कि भारत का विभाजन हो जाए।

अंतरिम सरकार की असफलता इस बात का स्पष्ट संकेत थी कि पाकिस्तान बनने की प्रक्रिया को अब कोई रोक नहीं सकता। नेहरू जी ने टिप्पणी की कि अंतरिम सरकार संघर्ष का क्षेत्र थी और सरदार पटेल ने 14 जून, 1947 की अखिल भारतीय कांग्रेस की बैठक में दिए गए अपने भाषण में कहा कि पाकिस्तान वास्तव में पंजाब और बंगाल में ही क्रियारत नहीं हैं बल्कि उसके अंकुर अंतरिम सरकार में भी निहित हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि अंतरिम सरकार को प्रांतों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं था। (जब बंगाल में लीग का मंत्रिमंडल था, तब कलकत्ता और नोआखाली में दंगे हुए। इन

दंगों में लीग मंत्रिमंडल न केवल निष्क्रिय रहा बल्कि उसके मामले को और गंभीर बना दिया) नेहरू जी ने महसूस किया कि जब गलियों में हत्याएँ हो रही हों और व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्तर पर क्रूरता का वातावरण छाया हुआ हो तब पद पर बने रहने का कोई मतलब नहीं होता हैं। सत्ता के शीघ्र हस्तांतरण से एक ऐसी सरकार के हाथ में शक्ति आएगी जो अपना उत्तरदायित्व समझ सके।

विभाजन को स्वीकार करने के पीछे एक कारण यह भी था कि कांग्रेस यह नहीं चाहती थी कि देश टुकड़ों में विभक्त हो जाए। कांग्रेस ने वाइसरॉय और अंग्रेज सरकार की इस नीति का समर्थन किया था कि भारतीय रजवाड़ों को स्वतंत्र रहने का विकल्प नहीं दिया जाए। अनुरोध या बल प्रयोग द्वारा उन्हें भारत या पाकिस्तान की यूनियन में शामिल कर लिया जाए।

गांधी जी और विभाजन

यह सभी लोग जानते हैं कि भारत के विभाजन के समय गांधी जी इतने निराश हो गए थे कि उन्होंने 125 वर्ष तक जिन्दा रहने की इच्छा भी त्याग दी थी। एक आम धारणा यह भी थी कि सत्ता के लोभी में गांधी जी के शिष्यों नेहरू और पटेल ने उनकी सलाह की अवहेलना की थी। गांधी जी पर इस विश्वासघात का प्रतिकूल असर पड़ा। लेकिन सार्वजनिक रूप से वे (गांधी जी) अपने शिष्यों की आलोचना नहीं करना चाहते थे।

गांधी जी के शब्दों में, उनकी लाचारी का मुख्य कारण यह था कि जनता पूर्णरूप से साम्प्रदायिक हो गयी थी, मुसलमान हिन्दुओं पर संदेह करने लगे थे तथा हिन्दू और सिक्ख भी यह विश्वास करने लगे थे कि अब परस्पर सह अस्तित्व संभव नहीं था। हिन्दुओं और सिखों की विभाजन की इच्छा के कारण गांधी जी एक ऐसे जन नेता रह गए थे जिन्हें एकता के लिए किए जा रहे संघर्ष में जनता का समर्थन प्राप्त नहीं था। मुसलमानों ने उन्हें अपना दुश्मन घोषित कर रखा था। जब अधिकांश जनता विभाजन चाहती थी, तब उसे स्वीकार करने के अतिरिक्त गांधी जी के पास कोई चारा नहीं था। 4 जून, 1947 की प्रार्थना सभा में गांधी जी ने कहा था ''आपकी माँगों की पूर्ति हुई क्योंकि आपने इसकी इच्छा व्यक्त की थी। कांग्रेस के कभी विभाजन की माँग नहीं की, लेकिन कांग्रेस जनता की नब्ज को पहचान सकती है। इसने महसूस किया कि हिन्दू और खालसा भी ऐसा चाहते हैं।

समाजवादियों और गांधीवादियों ने गांधी जी से यह अपील की कि कांग्रेसी नेताओं को नज़रअंदाज कर एकता के लिए संघर्ष की शुरुआत की जाए। गांधी जी ने स्पष्ट किया कि समस्या यह नहीं है कि अंग्रेजी नेताओं को छोड़कर वे आगे बढ़ने में हिचक रहे हैं। गांधी जी ने 1942 में कुछ कांग्रेसियों की असहमति के बावजूद भारत छोड़ो आंदोलन शुरू किया था। उस समय उनका फैसला सही साबित हुआ। गांधी जी ने उपयुक्त माहौल देखकर ही इस आंदोलन का आह्वान किया था। 1947 में खास समस्या यह थी प्रथावकारी शक्तियाँ लुप्त हो गयी थीं जिनके आधार पर कोई कार्यक्रम बनाया जा सकता था। उन्होंने स्वीकार किया ''आज मैं अनुकूल परिस्थितियों को दूर-दूर तक नहीं देख पा रहा हूँ। अतः मुझे उस समय का इन्तार करना पड़ेगा।''

पर यह समय कभी नहीं आया। राजनीतिक गतिविधियाँ तेजी से करवट ले रही थीं। 3 जून को विभाजन की घोषणा हुई और 15 अगस्त, 1947 को भारत का विभाजन हो गया। 14 जून, 1947 के अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की घोषणा में गांधी जी ने कांग्रेसियों को सलाह दी कि वर्तमान समय की माँग को देखते विभाजन को स्वीकार कर लेना चाहिए, लेकिन इसे हृदय से स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए और जब स्थिति सुधर जाए तब फिर से भारत को एक करने की कोशिश करनी चाहिए।

20.5 साम्प्रदायिक समस्या के प्रति कांग्रेस का रवैया

कई बार ऐसा कहा जाता है कि यदि कांग्रेस जिन्ना से समझौता कर लेती तो विभाजन को रोका जा सकता था। यह समझौता 1940 में भी हो सकता था जब जिन्ना ने पृथक राज्य की माँग की थी। 1942 में क्रिप्स मिशन भारत आया और 1946 में कैबिनेट मिशन प्लान आया। दोनों ही अवसरों पर जिन्ना से समझौता किया जा सकता था। मौलाना आजाद ने अपनी आत्मकथा ''इण्डिया विन्नस फ्रीडम'' में इस पक्ष का समर्थन किया है। यह मत इस तथ्य की उपेक्षा करता है कि जिन्ना ने जो माँग की थी, वह कांग्रेस के लिए स्वीकार करना असंभव था। जिन्ना ने माँग की थी कि कांग्रेस से तभी समझौता हो सकता है जब कांग्रेस अपने को हिन्दू निकाय और लीग को मुस्लिम के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार कर ले। इस माँग को स्वीकार कर लेने के बाद कांग्रेस का धर्मनिरपेक्ष ढाँचा नष्ट हो जाता। यह न केवल उन राष्ट्रवादी मुसलमानों के साथ विश्वासघात होता जो अपनी व्यक्तिगत हानि की परवाह न करते हुए कांग्रेस के साथ थे, साथ ही भारतीय जनता और उनके भविष्य के साथ भी खिलवाड़ होता। राजेन्द्र प्रसाद के शब्दों में कांग्रेस ''अपने अतीत को नकारकर, अपने इतिहास को झुठलाकर और अपने भविष्य के साथ छल करके ही ऐसा कर सकती थी।''

20.5.1 समझौते की नीति का खतरा

कांग्रेस ने इन शर्तों पर जिन्ना से समझौता करने से इन्कार तो कर दिया पर जिन्ना के दुराग्रह के बावजूद कांग्रेस ने मुसलमानों को रियासत देने की एकतरफा घोषणा की। कांग्रेस ने 1942 में क्रिप्स मिशन के साथ किए गए समझौते में मुस्लिम बहुल प्रांत को स्वायत्तता देने की बात मान ली। 1944 में गांधी जी ने जिन्ना से बात की और इस बात को स्वीकार किया कि मुस्लिम बहुत प्रांतों को आत्म निर्णय का अधिकार मिलना चाहिए। जब कैबिनेट मिशन प्लान ने यह प्रस्ताव रखा कि अगर मुस्लिम चाहें तो मुस्लिम बहुल प्रांतों (समूह ख और ग) के लिए अलग संविधान सभा का गठन किया जाएगा, तक कांग्रेस ने इसका विरोध नहीं किया। कांग्रेस ने अनिवार्य समूहीकरण का विरोध किया, (क्योंकि इसके जरिए उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रदेशों और आसाम को उन समूहों में शामिल होने के लिए बाध्य किया जा सकता था जिनमें शामिल होने की उनकी इच्छा नहीं हो सकती थी) लेकिन 1946 के अंत में नेहरू जी ने घोषणा की कि उनकी पार्टी संघ न्यायालय के निर्णय को स्वीकार करेगी कि समूहीकरण अनिवार्य होना चाहिए या वैकल्पिक। इसलिए जब ब्रिटिश कैबिनेट ने 6 दिसंबर, 1946 के अपने वक्तव्य में यह स्पष्ट किया कि समूहीकरण अनिवार्य होगा तो कांग्रेस ने उसे चुपचाप मान लिया। जैसा हमने पहले बताया है कि जब ब्रिटेन की सरकार ने 20 फरवरी, 1947 को भारत छोड़ने की घोषणा कर दी, तब नेहरू ने लियाकत अली खान से सहयोग की अपील की। अतः जब कांग्रेस ने 3 जून की योजना और विभाजन को स्वीकार किया तो यह लीग की माँग के सामने अंतिम समर्पण था। वस्तुतः मुस्लिम बहुल राज्य संबंधी लीग की लगातार माँग के कारण ही भारत को कटु यथार्थ से गुजरना पड़ा और कांग्रेस ने इस कटु यथार्थ को स्वीकार किया।

इस प्रकार रियायत की नीति को जिसके सहारे मुसलमानों को यह आश्वासन दिया जाता रहा कि उनके हित सुरक्षित रहेंगे, साम्प्रदायिक माँगों के सामने झुकना पड़ा। उदाहरण के लिए, कांग्रेस ने अलगाव की नीति को, मुसलमानों की नीति को मुसलमानों का भय समाप्त करने के लिए, स्वीकार कर लिया। कांग्रेस को यह आशा थी कि मुसलमान इस अधिकार का उपयोग नहीं करेंगे। यह एक सद्भावना पूर्ण विचार था, जबकि 1940 तक आते-आते मुस्लिम साम्प्रदायिकता का आधार अल्पसंख्यकों का डर नहीं रह गया था बल्कि उसका एक ही उद्देश्य था – एक स्वतंत्र संप्रभु मुस्लिम राष्ट्र की

स्थापना। परिणामस्वरूप कांग्रेस हर बार रियायतें देती रही और यह देखकर कि कांग्रेस नरम पड़ रही है, जिन्ना अपनी माँगों को बढ़ाते गए। इन रियायतों से साम्प्रदायिकता की जड़ें कमजोर नहीं हुई बल्कि इससे जिन्ना और लीग की शक्ति और मजबूत हुई और उनकी इस कामयाबी को देखते हुए ज्यादा से ज्यादा मुसलमान उनके साथ आ गए। मुस्लिम साम्प्रदायिकता के साथ हिन्दू साम्प्रदायिकता भी तेजी के साथ उभरी। हिन्दू साम्प्रदायवादियों ने अपने को हिन्दुओं के हितों का एकमात्र संरक्षक प्रदर्शित किया और कांग्रेस पर आरोप लगाया गया कि मुसलमानों को अपने पक्ष में करने के लिए वह हिन्दुओं का अहित कर रही है।

20.5.2 बुनियादी असफलता

कांग्रेस साम्प्रदायिकता के बढ़ते चरण को रोक नहीं पायी। इसका सबसे बड़ा कारण यह था कि 1940 में साम्प्रदायिकता का जो चरित्र था, उसे कांग्रेस समझ नहीं पायी। हालांकि कांग्रेस धर्मनिरपेक्षता के प्रति प्रतिबद्ध थी और गांधी जी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए अपनी जान दे दी लेकिन बुनियादी कमजोरी यह थी कि राजनीति और विचारधारा के स्तर पर साम्प्रदायिकता से लड़ने की दूरगामी योजना सामने नहीं आ सकी। कांग्रेसी नेता यह विश्वास करते थे कि रियायतें देने और समझौता करने से साम्प्रदायिक समस्या हल हो जाएगी।

बोध प्रश्न 3

1) निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़ें और उनके सामने सही (✓) अथवा गलत (✗) का निशान लगाएँ:

   i) सत्ता के लोभ में कांग्रेस ने विभाजन स्वीकार किया। ( )

   ii) अंग्रेज सरकार ने अपनी पिछली नीतियों के तहत विभाजन को स्वीकार किया। ( )

   iii) पाकिस्तान के निर्माण में कांग्रेस की रियायत और समझौते की नीति बहुत बड़ा कारण थी। ( )

   iv) कांग्रेस की वास्तविक असफलता का कारण यह था कि वह साम्प्रदायिकता से लड़ने के लिए लम्बी अवधि की योजना नहीं बना सकी। ( )

2) भारत के विभाजन के सन्दर्भ में गांधी जी ने अपने को असहाय क्यों पाया?

.....

.....

.....

.....

.....

20.6 सारांश

भारत का विभाजन मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की माँग को लेकर हुआ। पृथक राष्ट्र की माँग 1940 के बाद तेजी से उभरी। जिन्ना के नेतृत्व में लीग ने संवैधानिक तरीकों से और प्रत्यक्ष कार्रवाई करके राजनीतिक गतिरोध की ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जिससे विभाजन अवश्यम्भावी हो गया। लेकिन पाकिस्तान के निर्माण में अंग्रेजों का बहुत बड़ा हाथ था। अंग्रेज शासकों ने बढ़ते हुए राष्ट्रीय आंदोलन में गतिरोध उत्पन्न करने के लिए साम्प्रदायिक शक्तियों का इस्तेमाल किया। लीग को मुसलमानों की एकमात्र

प्रतिनिधि संस्था के रूप में स्वीकार किया और उसे वीटो की शक्ति दी। अंत में जब अंग्रेजों की नजर में अखंड भारत सुविधाजनक प्रतीत होने लगा, तब उन्होंने इसे एक रखने का थोड़ा प्रयत्न किया, पर जिन्ना की कारगर धमकियों के सामने उनकी एक न चली। साम्प्रदायिक दंगों को अधिकारीगण रोक नहीं पाए और विभाजन अवश्यम्भावी हो गया। कांग्रेस अपनी संपूर्ण प्रतिबद्धता के बावजूद भारत की अखंडता की रक्षा नहीं कर सकी। इसके दो कारण थे। यह राष्ट्रीय आन्दोलन में मुस्लिम जनता को शामिल करने में असफल रही और साम्प्रदायिकता से लड़ने की सही नीति नहीं अपना सकी।

20.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए–

1) i) 1937 के चुनाव में लीग का प्रदर्शन

ii) इसके आधार के प्रसार की जरूरत

iii) मुसलमानों को आकर्षित करने के लिए धार्मिक नारों का उपयोग कर उन्हें हिन्दुओं के विरुद्ध करना।

iv) मुसलमानों के लिए पृथक राष्ट्र की माँग को बार-बार दुहराना देखिए उपभाग 20.2.1।

2) उपभाग 20.2.2 और 20.2.3 देखें।

बोध प्रश्न 2

1) i) ✗ ii) ✗ iii) ✗

2) इसका सकारात्मक पक्ष यह था कि इसने भारतीय अखंडता के सिद्धांत को स्वीकार किया। इसका दोष यह था कि प्रांतों का समूहीकरण अनिवार्य है या वैकल्पिक, इसके संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं किया था।

देखिए उपभाग 20.3.2।

बोध प्रश्न 3

1) i) ✗ ii) ✓ iii) ✓ iv) ✓

2) गांधी जी असहाय इसलिए थे क्योंकि–

i) जनता में साम्प्रदायिकता तेजी से फैलती जा रही थी।

ii) अब वे अखंडता के प्रयास में जनता का साथ लेकर नहीं चल सकते थे।

iii) मुसलमानों, हिन्दुओं और सिक्खों ने विभाजन को अन्ततः स्वीकार कर लिया था।